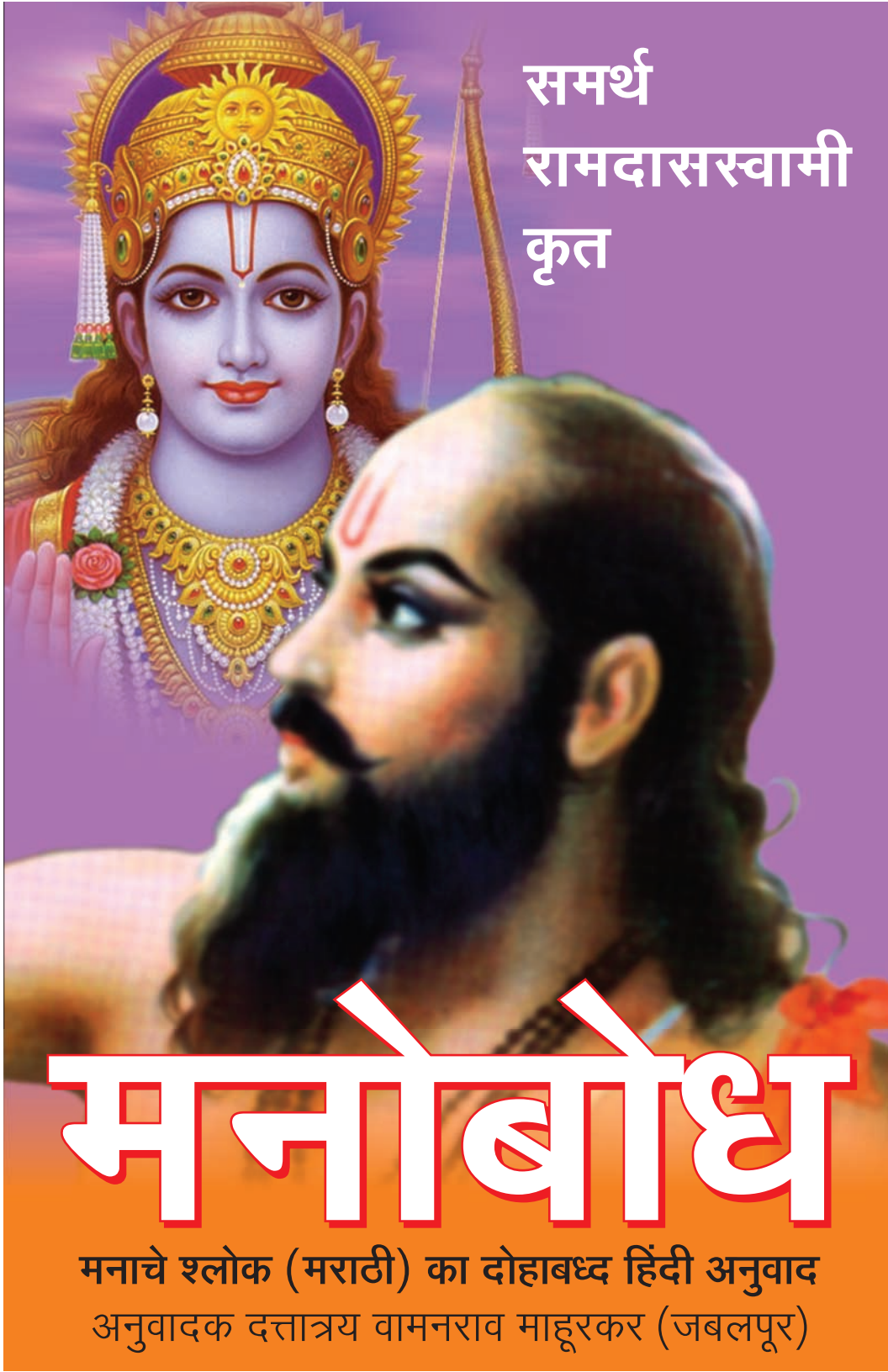

समर्थ रामदासस्वामी कृत

मनोबोध

मनाचे श्लोक (मराठी) का दोहाबध्द हिंदी अनुवाद

अनुवादक दत्तात्रय वामनराव माहूरकर (जबलपूर)

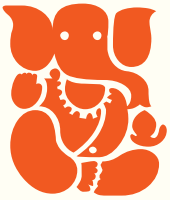

मनोबोध

समर्थ श्री रामदास स्वामी कृत

मनाचे श्लोक (मराठी)

का

दोहाबद्ध हिन्दी अनुवाद

अनुवादक

दत्तात्रेय वामनराव माहुरकर

जबलपुर

ॐ

।। जय श्री राम ।।

सभी गुणों के ईश हैं। गणाधीश प्रथमेश॥
मूल वहीं प्रारम्भ हैं। निर्गुण हैं सगुणेश॥१॥
नमो मातृका शारदा। चतुर्वाणि की मूल॥
अनंत-पथ दर्शा सकूँ। राघव पथ सुखमूल॥२॥

भक्ति मार्ग से ही चलो। सज्जन मनुवा मान॥
अनायास ही हरि मिलें। हो जाएँ कल्याण॥३॥
निंदनीय जब कम हों। जनता रखे न मान॥
वन्दनीय मन से करो। जन-जन दे सम्मान॥४॥

सुबह सवेरे याद से। भज लें, सीताराम॥
वाणी से फिर नाम लो। जय जय जय श्रीराम॥५॥
सदाचार ही श्रेष्ठ है। आचरिये दिन रात॥
वह मानव ही धन्य है। जनता जिसके साथ॥६॥

दुष्टवासना ना रखो। अच्छी नहीं ये बात॥
बुद्धि में नहीं पाप हो। इससे होता घात॥७॥
सदा नीति से तुम चलो। ना होंगे बरबाद॥
मन में धरो विवेक तो। गुणिजन रख्खें याद॥८॥

त्याग, पाप-संकल्प तो। मनुवा दुखी न होय॥
सत्य ही हो संकल्प तो। जीवन सुखमय होय॥९॥
विषय-वासना ना धरो। कल्पना ही बिसराय॥
जगनिंदा से बच सको। विकार रहित सुभाय॥१०॥

---

* परा, पश्यन्ति, मध्यमा एवं वैखरी - चतुर्वाणि

क्रोध करें पछता रहे। व्यर्थ हि ऐसा क्रोध॥
बहु विकार हो काम से। ले ले मनुवा बोध॥११॥
मद को नहीं स्वीकार कर। मन को लागे रोग॥
मत्सर तो है दंभयुत। भोगे नाना भोग॥१२॥

धीरज श्रेष्ठ न छोड़िये। अन्तर्मन की शान॥
नीच वाणी सहज सहे। उसका बढ़ता मान॥१३॥
नम्र वाणि से बोलिये। जन-जन दे सम्मान॥
सज्जन मन संतुष्ट हों। वो ही कार्य महान॥ १४॥

शरीर छूटे, चल बसे। शेष कीर्ति बच जाय॥
सज्जन मन वह कर्म कर। जन-जन को जँच जाय॥१५॥
चन्दन सम घिसते चलो। जग के आओ काज॥
सज्जन का मन राखिये। उसमें कैसी लाज॥१६॥

दूजे का धन लो नहीं। रोको अपने हाथ॥
स्वार्थ बुद्धि से होत हैं। जग में सारे पाप॥१७॥
खोटे कारज जो करे। लिये पाप सब घेर॥
मनानुकूल नहीं हुआ। गिरे दुखों का ढेर॥१८॥

सदा राम से प्रीति हो। धरो हृदय में राम॥
दुःख सब छँट जायेंगे। राम हि आये काम॥१९॥
विवेक भर निज रूप में। आत्म-स्वरूप समाय॥
दुःख, देह का सुख कहो। दुख ही सुख हो जाय॥२०॥

जग में सब सुख प्राप्त हैं। बोलो, ऐसा कौन?॥
बहु विचारी मन मेरे। ढूँढ, रहो नहि मौन॥२१॥
जो कुछ तूने कर रखा संचित पूर्व सुजान॥
वैसा ही तू भोगता। विधि का यही विधान॥२२॥

अन्तर्तम मन में कभी। दुःख न आने देय॥
मन रे, चिंता-शोक को। मन से जाने देय॥२३॥
विवेक धर, निज रूप में। देह भाव बिसराय॥
विदेहि बन, फिर मुक्ति का। भोग सुलभ हो जाय॥२४॥

मन रे, तू बतला जरा। रावण का क्या हाल॥
अकस्मात ही खा गया। राजपाट, सब काल॥२५॥
इसीलिए इस देह का। छोड़ि मोह तत्काल॥
बलपूर्वक पीछे पड़ा। महाकाल विकराल॥२६॥

कर्मों के ही योग से। जन्म लियो है जीव॥
किन्तु, काल के गाल में। समा जाए हर जीव॥२७॥
महावीर, बलवान भी। मृत्यु मार्ग से जाय॥
जन्मा जो भी जीव है। काल-गाल में जाय॥२८॥

सभी जीव 'मैं-मैं' कहें। 'मैं' की क्या औकात॥
मृत्युभूमि में सत्य है। एक मृत्यु की बात॥२९॥
'चिरंजीवि' समझे सभी। कौन जिया चिरकाल॥
अकस्मात सब छोडिकै। उठा लियो है काल॥३०॥

एक मरे तो शोक है। दूजे को दिन रात॥
वह दूजा भी चल बसा। कौन निभाता साथ॥३१॥
लोभ, क्षोभ का मूल है। ममता करें विलाप॥
मरकर फिर से जन्म लें। जन्म-मृत्यु अभिशाप॥३२॥

व्यर्थ दुखी होता मनुज। चिन्ता से दिन रात॥
होनहार तो होत है। टाले टले न बात॥३३॥
कर्मों का ही भोग, तू। भोग रहा नादान॥
बुद्धिहीन दुख पायेगा। वियोग से ही जान॥३४॥

बिनु राघव आशा नहीं। काहे मन भटकाय॥
मानव का यश आज है। पल में कल मिट जाय॥३५॥
चारों वेद बखानते। महिमा अगम अपार॥
राम हि पालनहार हैं। राम हि तारन हार॥३६॥

सदा सत्य ना छाँड़िये। मनुवा यह सुविचार॥
मित्थ्या का मंडन करे। यह तो है कुविचार॥३७॥
सत्य, सदा ही सत्य है। सदा सत्य ही बोल॥
मित्थ्या तो मित्थ्या रहे। छोड़ो, कुछ ना मोल॥३८॥

गर्भवास में दुःख है। कोख बन गयी भोग॥
जन्म लिये, अति यातना। बड़ा विषम यह रोग॥३९॥
चार ओर से बन्द है। कोख हि कारागार॥
अधोशीष शिशु सह रहा। दुख का भोग अपार॥४०॥

सभी वासना छोड़ दे। 'आना जाना' जाय॥
धन या स्त्री की कामना। छोड़, लाभ फिर पाय॥४१॥
गर्भवास की यातना। 'आना-जाना' भोग॥
राम मिला दे रे मना। छूटे सारे रोग॥४२॥

मेरा हित करना तुझे। रखियो मनुवा ध्यान॥
रघुनायक श्रीराम का। करूं हृदय में ध्यान॥४३॥
वायुपुत्र के स्वामि वे। रघुनंदन श्रीराम॥
त्रैलोकी के नाथ ही। जगको तारे राम॥४४॥

राम बिना नहि बोलना। कछु मन मेरे और॥
वृथा बात जो की कभी। सुख का नाही ठौर॥४५॥
घड़ीघड़ी यह काल ही। आयुष लेता लूट॥
देह गया, रिश्ते गये। सबही निकला झूठ॥४६॥

रघुनायक बिन बौलिकै। जिव्हां व्यर्थ थकाय॥
निद्रा में बड़बड़ करें। जग में हँसी उड़ाय॥४७॥
सदा वाणि से बोलिये। राम, सियापति राम॥
पाप रूपी अहं नहीं। मन में रहे न काम॥४८॥

आलस मत करियो कभी। सत्य वचन, कर बात॥
ना तो फिर श्री राम का। कैसा जोड़े साथ॥४९॥
सुख घड़ियाँ जब जुड़ गयी। सुख मिल गया अपार॥
सब छूटे, कुछ ना बचे। राम हि राखन हार॥५०॥

रक्षा करने शरीर की। यत्न किये अविराम॥
काल, अन्त में ले गया। यत्न न आये काम॥५१॥
भक्ति भाव से रे मना। भज लो सीताराम॥
भव की चिन्ता छोड़ दे। पार लगाये राम॥५२॥

भव के भय से काँपता। डरो न हरि के दास॥
धीरज धर, भय छाँड़िके। एक राम की आस॥५३॥
रघुवीर सम स्वामि का। जिसके सिर पर हाथ॥
कुपित होत यमराज भी। राघव देंगे साथ॥५४॥

धनुषधारि श्री रामजी। दीनों के हैं नाथ॥
राम को सम्मुख देख हि। काल रहा थर्रात॥५५॥
जन-जन में इस वाक्य को। मान सत्य प्रमाण॥
अभिमानी जो राम के। भक्त, राम के प्राण॥५६॥

राघव पद महिमा बड़ी। कीरति बरनि न जाय॥
भक्त शत्रु के भाल पर। रामधनुष गिर जाय॥५७॥
निज विमान में ले गये। अवधवासि को राम॥
अभिमानी जो राम के। उसे न भूले राम॥५८॥

समर्थ प्रभु श्री राम के। सेवक भी नहीं गौण॥
उन पर भृकुटी तान लें। ऐसा जग में कौन॥ ५९॥
लीला जाकि बखानते। त्रिलोक करें प्रणाम॥
अभिमानी जो राम के। उसे न भूले राम॥६०॥

संकट में थे देवता। प्रभु ने लिया बचाय॥
महाप्रतापी राम के। गुण, बल गिने न जाय॥६१॥
शूलपाणि अरू शैलजा। रटते जिसका नाम॥
अभिमानी जो राम के। उसे न भूले राम॥६२॥

देवि अहिल्या, शाप से। बनी शिला-पाषाण॥
रघुनायक की चरण रज। देती जीवनदान॥६३॥
चार वेद नित गा रहे। और न दूजा काम॥
अभिमानी जो राम के। उसे न भूले राम॥६४॥

प्रभु की लीला से बसे। मेरू और मांदार॥
सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र भी। मेघ धरे जलभार॥६५॥
विभीषण-बजरंगी को। चिरंजीवि चिरधाम॥
अभिमानी जो राम के। उसे न भूले राम॥६६॥

राम, उपेक्षा ना करें। शंकित होता जीव॥
निश्चय ही करता नहीं। मानव कितना क्लीव॥६७॥
भक्त-भार वहता रहे। कहते वेद पुराण॥
अभिमानी जो राम के। उसे न भूले राम॥६८॥

जिस मन जैसा भाव है। वैसा प्रभु का वास॥
जितना प्रभु के पास हो। उतने ही प्रभु पास॥६९॥
हो अनन्य, इक रूप हो। भक्त और श्रीराम॥
अभिमानी जो राम के। उसे न भूले राम॥७०॥

भक्त निकट करुणानिधि है। कहीं न जाते और॥
करुणामय निज भक्त का। धीरज परखें घोर॥७१॥
कैवल्य दाता दानी। सुखानंद के धाम॥
अभिमानी जो राम के। उसे न भूले राम॥७२॥

चक्रवाक के विरह में। प्रकटे सूर्य महान॥
संकट में जो भक्त हो। दौड़ेंगे प्रभु जान॥७३॥
राम भक्ति की चोट से। बजे नगाड़े आम॥
अभिमानी जो राम के। उसे न भूले राम॥७४॥

मन रे, तुझसे प्रार्थना। करता हूँ मैं एक॥
हों चकित तू हर-हमेश। रघुनायक को देख॥७५॥
कभी अवज्ञा ना करो। धर तू मनुवा धीर॥
राम निकट बसियो सदा। सज्जन मन बलवीर॥७६॥

चारों वेद, पुराण भी। करते हैं गुणगान॥
जिस कारण संतोष हों। उसको तू पहचान॥७७॥
उसी चरण की शरण में। चंचलता को त्याग॥
राम निकट बसियो सदा। सज्जन मन बडभाग॥७८॥

सब-सुख तुझको मिल सकें। ऐसा स्थान महान॥
आदर पूर्वक राम में। लक्ष्य धरो श्रीमान॥७९॥
विवेकपूर्वक देह के। विकार को पलटाय॥
राम निकट बसियो सदा। सज्जन मन समझाय॥८०॥

मनःशान्ति के काज से। भटकें, हित ना पाय॥
थक जायेगा ढूँढते। सुख तो मिल ना पाय॥८१॥
सुविचारी हे मनुज रे। मन को दीजे बोध॥
राम निकट बसियो सदा। दूर होय अवरोध॥८२॥

अन्य भक्त के सम सही। तू भी चलता जाय॥
रघुनायक अपनाइयो। कहीं न वो भटकाय॥८३॥
वे दीनों के नाथ हैं। उनका बिरुद महान॥
राम निकट बसियो सदा। सज्जन मन गुणवान॥८४॥

सज्जन मन इस बात की। मन में बाँधो गाँठ॥
अपना हित तू साध ले। फिर तो तेरे ठाठ॥८५॥
रघुनायक बिन और भी। कभी न बोलो, बोल॥
हरि को हृदय बसाइये। मगन होई के डोल॥८६॥

मन रे जग में मौन रह। व्यर्थ न मुँह से बोल॥
रामकथा कहते रहो। तोल-मोल कर बोल॥८७॥
जहाँ राम का नाम नहि। छोड़ो भी वह धाम॥
वन कानन में जा बसो। करो भक्ति अविराम॥८८॥

उसकी संगत ना धरो। बढ़े 'अहं' का ताप॥
सदानंद छूटे सदा। 'मैं-मैं' रटता जाप॥८९॥
भ्रष्ट होय बुद्धी जहाँ। मिटे राम का नाम॥
साथ न मीठा जानिये। भूलो उसका नाम॥९०॥

राम बिना बीती घड़ी। सुन ले ध्यान लगाय॥
उतनी तेरी हानि है। उतना हुआ अपाय॥९१॥
रघुनायक बिन कष्ट है। मनुवा सुनो सुजान॥
लक्ष्य एक रघुनाथ हो। दक्ष सुभट वह जान॥९२॥

प्रभु का निर्गुण रूप ही। मनश्चक्षु से देख॥
आँख खोल फिर देख लें। सगुण रूप सविवेक॥९३॥
सगुण रूप में प्रीति हो। अरु निर्गुण का ध्यान॥
सर्वेश्वर का दास वह। जग में धन्य महान॥९४॥

देव कार्य में रत रहे। देह समर्पित होय॥
राम नाम रटता रहे। वाणि राममय होय॥९५॥
नियत कर्म करता रहे। उत्तम कर्म सुजान॥
सर्वेश्वर का दास वह। जग में धन्य महान॥९६॥

जाकी जस कथनी रहे। वैसी करनी नेक॥
पूजे कितने देवता। एकहि ईश्वर देख॥९७॥
सगुण रूप भजता रहे। मन निर्भ्रम कर जान॥
सर्वेश्वर का दास वह। जग में धन्य महान॥९८॥

विकारकारी काम भी। मन में कभी न लाय॥
ब्रह्मचारि अरु तापसी। उदासीन रह जाय॥९९॥
तमोगुण लवमात्र नहीं। जीवन मुक्त सुजान॥
सर्वेश्वर का दास वह। जग में धन्य महान॥१००॥

ना मद, नहीं मत्सर ही। स्वार्थ बुद्धि से दूर॥
ना प्रपंच का पाश भी। रहे स्वयं में चूर॥१०१॥
नम्र वचन ही बोलता। सबका कर सम्मान॥
सर्वेश्वर का दास वह। जग में धन्य महान॥१०२॥

आत्मतत्त्व चिन्तन करें। औरों को समझाय॥
दंभ युक्त चर्चा कभी। घेरे नहीं घिराय॥१०३॥
आदि रूप जो विश्व का। उसका ही गुणगान॥
सर्वेश्वर का दास वह। जग में धन्य महान॥१०४॥

मृदुवचन, निष्कलंक है। जग में प्रिय आचार॥
सविवेकी, सत्यवादी। उससे प्रभु को प्यार॥१०५॥
एक अभी, दूजा कभी। ऐसा नहीं बयान॥
सर्वेश्वर का दास वह। जग में धन्य महान॥१०६॥

युवा काल निर्जन बसे। चिन्तन करता जाय॥
कल्पना के जालों में। उलझे ना उलझाय॥१०७॥
दृढ निश्चय से ना हटे। जिसका मनुवा जान॥
सर्वेश्वर का दास वह। जग में धन्य महान॥१०८॥

दुष्ट वासना नष्ट हो। भाग वासना अंत॥
प्रभु को बांधे प्रेम से। ऐसा होता संत॥१०९॥
भक्तों का हि ऋणी रहे। प्रभु स्वयं ही जान॥
सर्वेश्वर का दास वह। जग में धन्य महान॥११०॥

दया दीन से जो करें। हृदय धरे जो प्रेम॥
शरणागत का भय हरे। जगवंदन सप्रेम॥१११॥
क्रोध, लोभ मन में नहीं। ऐसा संत सुजान॥
सर्वेश्वर का दास वह। जग में धन्य महान॥११२॥

राम नाम मुख से कहे। जीवन होय कृतार्थ॥
भक्ति, क्रिया, उपासना। नित्य नियम परमार्थ॥११३॥
उदासीन हो, कर्म कर। जीवन का है सार॥
वृत्ति ही तो निवृत्ति हो। खुले मोक्ष का द्वार॥११४॥

प्रपंच सुख में वासना। वृत्ति रूप यह रोग॥
पूर्व पाप से, कामना। जडे विषय का रोग॥११५॥
निष्काम भाव से सदा। करो राम का जाप॥
मन में ना हो कल्पना। मिट जाये भव ताप॥११६॥

कल्पांतक बस कल्पना। उसे सत्य ना जान॥
राम कभी ना मिल सकें। व्यर्थ सर्व नादान॥११७॥
आदर, प्रीति न कभी। नहीं मिलेंगे राम॥
मन में जब हो कामना। कहाँ मिलेंगे राम॥११८॥

कल्पवृक्ष भी राम हैं। कामधेनु भी राम॥
चिन्तामणि भी राम हैं। कुबेर का धन, राम॥११९॥
साथ धरो तो देख लो। सत्ता लागे हाथ॥
तुलना से भी दूर है। त्रैलोकी के नाथ॥१२०॥

कल्पतरू की छाँव में। खड़ा रहा दिन रात॥
दुःख भरा हो हृदय में। दुःख रहेगा साथ॥१२१॥
सन्त समागम में गया। वहाँ बढ़ाया वाद॥
जीवनभर फिर शोक से। होगा रे बरबाद॥१२२॥

स्वस्वरूप का ध्यान भी। छूटा, बढ़ता ताप।
बलपूर्वक फिर हृदय में। समा गया संताप॥१२३॥
'मैं मैं', 'तू तू' वाद से। सुखानंद लुट जाय॥
रघुपति से श्रद्धा गयी। दुविधामय हो जाय॥१२४॥

कामधेनु घर में बँधी। छाछ माँगता जाय॥
हरि का ज्ञान भुलाइके। विवाद में फँस जाय॥१२५॥
हाथ में धर चिन्तामणि। काँच मांगता जाय॥
वो ही फिर मिलता उसे। जो भी जिसको ध्याय॥१२६॥

बुद्धि स्थिर ना होत है। मूर्ख न पाये ज्ञान॥
काम भरा हो चित्त में। हटे राम का ध्यान॥१२७॥
लोभ बढ़ाये क्षोम को। मनुवा दुख ही पाय॥
विषय भोग में लिप्त जो। हीन-दीन बन जाय॥१२८॥

भक्तिहीन की जिन्दगी। जीवन होता दीन॥
महामूर्ख को दुख बड़ा। सुख भी जाये छीन॥१२९॥
श्रद्धापूर्वक मन कभी। करो राम से प्यार॥
राम बिना नहि चाहिये। सोने का संसार॥१३०॥

असार यह संसार है। नाही उसमें सार॥
सत्य ढूँढकर पाइये। राम हि तारनहार॥१३१॥
विष खाओं तो क्या मिलें? जीवन दुखमय होय॥
राघव, राजाराम को। भजिये, सुखमय होय॥१३२॥

सुंदरता की मूर्ति हैं। घनश्याम श्रीराम॥
महाप्रतापी वीर हैं। धैर्यशील श्रीराम॥१३३॥
संकट से रक्षा करें। भक्तों की, प्रभुराम॥
सुबह सबेरे चित्त में। जपिये 'जय श्रीराम'॥१३४॥

महाबली श्रीराम जी। लें धनुष दोउ हाथ॥
महाकाल विकराल भी। भय से मलता हाथ॥१३५॥
मनुज किंकर क्षुद्र है। सम्मुख जब श्रीराम॥
सुबह सबेरे चित्त में। जपिये 'जय श्रीराम'॥१३६॥

सुखानंद, भयहारि हैं। परमानन्द महान॥
भक्तिभाव से ही भजें। जग में सीता राम॥१३७॥
अनाचार, मत्सर तजे। विवेक से ले काम॥
सुबह सबेरे चित्त में। जपिये 'जय श्रीराम'॥१३८॥

अन्तर्मन से जागिये। नित्य नियम बड़भाग॥
राम नाम लेते रहो। संकट जाये भाग॥१३९॥
अहंकार, आलस सभी। छोड़, राम को थाम॥
सुबह सबेरे चित्त में। जपिये 'जय श्रीराम'॥१४०॥

जिनके नामःस्मरण से। महादोष कट जाय॥
जिनके नामःस्मरण से। मुक्ति मार्ग मिल जाय॥१४१॥
जिनके नामःस्मरण से। पुण्य लाभ बिनु दाम॥
सुबह सबेरे चित्त में। जपिये 'जय श्रीराम'॥१४२॥

खर्च न होगा गाँठ का। बोलो जब 'श्रीराम'॥
शरीर को ना कष्ट है। बोलो 'जय श्रीराम'॥१४३॥
महाघोर संसार के। जीतो शत्रु तमाम॥
सुबह सबेरे चित्त में। जपिये 'जय श्रीराम'॥१४४॥

शरीर को जब कष्ट हो। बड़ा दुःख हो जाय॥
रामनाम के जाप से। महा दुःख कट जाय॥१४५॥
सदाशीव जपते रहें। देव देव का नाम॥
सुबह सबेरे चित्त में। जपिये 'जय श्रीराम'॥१४६॥

दान, व्रत, उद्यापना। धनाभाव रुक जाय॥
विविध मार्ग की साधना। नाना संकट लाय॥१४७॥
मन ही मन जपते रहो। दीनदयालू राम॥
सुबह सबेरे चित्त में। जपिये 'जय श्रीराम'॥१४८॥

सबका एक हि सार है। सत्य सार समझाय॥
ग्रंथों में फिर ढूँढ लो। व्यर्थ न मन भटकाय॥१४९॥
व्यर्थ न तू संदेह कर। छोड़ विकल्प तमाम॥
सुबह सबेरे चित्त में। जपिये 'जय श्रीराम'॥१५०॥

नहीं कर्म, ना धर्म ही। योग नहीं ना भोग॥
कुछ भी पूरा ना हुआ। नहीं त्याग ना जोग॥१५१॥
दास कहे विश्वास से। जपो राम का नाम॥
सुबह सबेरे चित्त में। जपिये 'जय श्रीराम'॥१५२॥

राम नाम के जाप से। काम होय निष्काम॥
चराचर में बसा हुआ। देखो सीताराम॥१५३॥
द्वंद्व मिटे, निर्द्वंद्व हो। प्रभु गुण की हो आस॥
हरि भजन में जो तेरा। होय वृत्ति विश्वास॥१५४॥

अरे, अरे जिस मनुज का। राम में न विश्वास॥
दुख ही दुख फिर भोगता। जब तक चलती श्वास॥१५५॥
चिन्ता जग की, देह की। वृथा हृदय में थाम॥
कैवल्यदानी श्रेष्ठ हैं। स्वामी सीताराम॥१५६॥

मन रे, पावन होइकै। राघव को ही जोड़॥
मन में दृढ़ विश्वास धर। भव की चिंता छोड़॥१५७॥
जीव भाव से मनुजने। भव को साँचा मान॥
असत् वस्तु में धारणा। फँसा व्यर्थ नादान॥१५८॥

श्री हरि जी सम्मान से। शंकर हृदय समाय॥
उनको हृदय बसाइये। भवसागर तर जाय॥१५९॥
दुर्धर मत्सर, काम को। जलाइये दिन रात॥
कार्य कठिन, पीछा करो। राम हि देंगे साथ॥१६०॥

मत्सरवश तू होइके। नामःस्मरण न छोड़॥
अति आदर से नाम को। निजध्यास से जोड़॥१६१॥
समस्त साधक मार्ग में। तुले न तुलिये नाम॥
नाम सार है भक्ति का। एक नाम 'श्रीराम'॥१६२॥

विविध रूप भगवान के। अनेक उनके नाम॥
तुले न ताहि सकल मिलैं। एक नाम 'श्रीराम'॥१६३॥
नर पामर तो क्षुद्र है। उसकी क्या पहचान॥
सदाशीव विष पी चुके। जपते 'जय श्रीराम'॥१६४॥

जला चुके जो काम को। करे राम का ध्यान॥
उमा मातृ को सादर हि। सुना रहे गुणगान॥१६५॥
ज्ञानी, विरागी, समर्थ। शिवके हिरदे राम॥
उनको दृढ़ विश्वास है। एक नाम 'श्रीराम'॥१६६॥

'विठ्ठल' ने सिर पर धरा। शिव को जो दिन रात॥
उनके भी तो हृदय में। बसे राम दिन रात॥१६७॥
चन्द्रमौली शांत हुए। जपते जय श्री राम॥
मुक्त करेंगे जीव को। अंत समय श्री राम॥१६८॥

योगेश्वर को राम जी। देते हैं आराम॥
गिरिजाशंकर नित्य ही। जपते सीताराम॥१६९॥
भालचन्द्र को शान्ति दें। धरें कंठ में राम॥
मुक्त करेंगे आपको। अंत समय श्रीराम॥१७०॥

मुख में जिनके राम है। पाते हैं चिरधाम॥
सदानंद आनंद में। अनुभूत विश्राम॥१७१॥
विभ्रम से थक जायेगा। नहीं मिले आराम॥
नाम हि है निजधाम तो। दुःख मिटाये राम॥१७२॥

मुख में जिनके राम है। नहीं बाधता काम॥
राम नाम गुणगान से। धीरज आये काम॥१७३॥
हरिभक्त की शक्ति से। मिटे काम का नाम॥
धन्य वीर बजरंग जी। जिनके हिरदे राम॥१७४॥

राम नाम ही श्रेष्ठ है। लेते नहीं अघाय॥
सुंदर है, बहु स्वल्प है। बिना मोल मिल जाय॥१७५॥
भव का ताप जला सकें। ऐसी शक्ति महान॥
साधन है कैवल्य का। मानव इतना जान॥१७६॥

जब भी तुम भोजन करो। या जनता में वास॥
आदर से अरु घोष से। रामनाम का ध्यास॥१७७॥
भोजन की सब शुद्धि हो। रस को सिद्ध बनाय॥
हवन कर्म समझो इसे। अनायास हरि पाय॥१७८॥

वाणी में नहि राम तो। उसकी हानी घोर॥
वह जीवन ही व्यर्थ है। क्षुद्र जान, नहि थोर॥१७९॥
वेद शास्त्र भी प्रेम से। गाते जिसका नाम॥
व्यासवाणि भी बोलती। अतिश्रेष्ठ हरि नाम॥१८०॥

रघुनायक के नाम से। नहीं चुराओं जान॥
अति आदर से राम को। जपा करों श्रीमान्॥१८१॥
बिना मोल मिल जाय रे। तुझको तो भगवान॥
वैदेही पति राम का। करो घोष गुणगान॥१८२॥

नाम घोष करता जहाँ। सादर, भक्त सुजान॥
गिरिकंदर में छुप गये। दोष, भक्त के जान॥१८३॥
नाम घोष होता जहाँ। बसे हरि तहँ जान॥
शिवजी पागल होइके। खेंचे लंबी तान॥१८४॥

प्रभु ही दाता अन्न का। उसकी कीर्ति गाय॥
वही सभी चिन्ता करें। अपना कुछ ना जाय॥१८५॥
नाम उसीका लीजिए। बिना खर्च मिल जाय॥
हरि भी ऐसे भक्त को। अनायास मिल जाय॥१८६॥

तीनों लोक जला सकें। ऐसा शिव का क्रोध॥
राम नाम से शांत, शिव। इससे ले ले बोध॥१८७॥
विश्वमाता, उमा सती। जपती जिसका नाम॥
सावध हो, तू मनुज रे। जपना 'जय श्रीराम'॥१८८॥

अजामील पापी बड़ा। नारायण सन्तान॥
अन्तकाल वह तर गया। 'नारायण' कह जान॥१८९॥
गणिका के घर एक शुक। उसे सिखाया 'राम'॥
पुराण में ख्याति हुई। मुख से रटते राम॥१९०॥

भक्त बड़ा प्रल्हाद था। दैत्यराज का पूत॥
पुत्र जपे हरिनाम, वह। महासन्त अवधूत॥१९१॥
पाप भरे उसके पिता। ना भाये हरिनाम॥
दैत्यराज को अति घृणा। मुख से कहे न राम॥१९२॥

जिस मुख ना हरिनाम हो। उसकी मुक्ति न होय॥
वृथा, अहं के भार से। जीवन दुखमय होय॥१९३॥
अन्तकाल अति दीन हो। बिकट मृत्यु हो जाय॥
इसीलिए हरि को जपो। संकट निकट न आय॥१९४॥

हरि का नाम महान है। तारे हैं पाषाण॥
मानव की क्या बात है। तरना है आसान॥१९५॥
मुख से राम कहा नहीं। जिसको ना विश्वास॥
फिर तो ऐसे दुष्ट का। होगा घोर विनाश॥१९६॥

धन्य नगर वाराणसी। लगे पुण्य की रास॥
काशी में जब मृत्यु हो। होता पाप-विनाश॥१९७॥
पूर्वज सारे तर गये। मुख से बोलो राम॥
विश्वेश्वर समझा रहे। पाओगे चिरधाम॥१९८॥

कर्मकाण्ड की क्या कहें? सांगोपांग न होय॥
थोड़ा ही जो न्यून्य हो। पुण्य मिले ना कोय॥१९९॥
कर्मकाण्ड करता रहा। भूत-दया बिसराय॥
बिना मोल का नाम भी। उसके मुख ना आय॥२००॥

द्वेष्टा है जो नाम का। उस पर यम की मार॥
राम नाम पर शक करें। खुले नर्क के द्वार॥२०१॥
आदरपूर्वक वाणि से। जप लो सीता-राम॥
देह बुद्धि के दोष तब। अनायास नाकाम॥२०२॥

सहज भाव से नम्र हो। मिटे बुद्धि के दोष॥
मानव ऐसा कार्य कर। सज्जन को संतोष॥२०३॥
सत्कार्य ही करो सदा। कष्ट करें यह देह॥
जग में सगुण उपासना। नित्य करो सस्नेह॥२०४॥

हरिकीर्तन में डूब जा। करो राम आख्यान॥
तत्त्वरूप चिन्तन करो। भूल देह का ध्यान॥२०५॥
परस्त्री, परद्रव्य का। ना करना कुविचार॥
ना तो फिर तुम नर्क के। होंगे भागीदार॥२०६॥

स्वयं आचरण ना करें। नाना भाषण देत॥
उसको, उसका चित्त ही। उलाहना है देत॥२०७॥
मन का घोड़ा स्वैर है। दौड़े चारों खूँट॥
ऐसे को हरि ना मिलें। गाल बजाये झूठ॥२०८॥

विवेक से पलटाइये। अपने कर्म अनेक॥
शुद्ध आचरण यूँ करो। सज्जन जाने नेक॥२०९॥
जन में जैसा बोलता। वैसा चलना सीख॥
कल्पना हि भवताप की। भूलो तो ही ठीक॥२१०॥

संध्या, स्नान किया करो। एकनिष्ठ हो ध्यान॥
स्वैराचारी चित्त को। विवेक से दो ज्ञान॥२११॥
प्राणिमात्र से हो दया। साँच न छोड़ा जाय॥
भक्तिभाव से हरि भजे। समाधान मिल जाय॥२१२॥

क्रोध न उपजे चित्त में। पड़े बुद्धि पर धूल॥
संतो की संगत भली। विकार जाएँ भूल॥२१३॥
दुष्ट और चांडाल की। संगत, उपजे पाप॥
ऐसी संगत छोड़ दो। मुक्ति मिलेगी आप॥२१४॥

सदा सर्वदा रे मना। धरिये सज्जन संग॥
भक्तिभाव के उदय से। प्रभु प्रेम में दंग॥२१५॥
बिना किये मत बोलिये। जिव्हां रोकी जाय॥
चर्चा हो जब तत्त्व की। परमारथ को पाय॥२१६॥

जन में व्यर्थ विवाद हो। उसे शीघ्र दे छोड़॥
सुखकारक चर्चा जहाँ। वहाँ ज्ञान को जोड़॥२१७॥
क्रोध, दुःख मन के सभी। अनायास मिट जाय॥
चर्चा हो जब तत्त्व की। परमारथ को पाय॥२१८॥

सार्थक चर्चा वह रहे। विवाद ही सुलझाय॥
विवेक पूर्वक मनुज का। अहं हि जीता जाय॥२१९॥
अहंकार ही साथ में। विकार नाना लाय॥
चर्चा हो जब तत्त्व की। परमारथ को पाय॥२२०॥

तेरी ही हितकारिणी। वाणी, साँची जान॥
अपने ही हित के लिये। ढूँढो सारा ज्ञान॥२२१॥
क्षुद्र होय आचार जो। ढोंग न मन को भाय॥
चर्चा हो जब तत्त्व की। परमारथ को पाय॥२२२॥

कितने वक्ता बोलते। सुनते श्रोता लाख॥
जस के तस ही वाद हैं। यत्न करो तुम लाख॥२२३॥
कितना ही है दंभ जो। संशय और बढ़ाय॥
चर्चा हो जब तत्त्व की। परमारथ को पाय॥२२४॥

शब्दच्छल करते रहें। वे पंडित कहलाय॥
ब्रह्मदैत्य ही बन गये। नीच योनि में जाय॥२२५॥
ऐसी प्रतिभा के धनी। और न कोई होय॥
ज्ञान-बुद्धि से रे मना। अहंकार को धोय॥२२६॥

मुफ्त हि गाल बजाइये। नहीं खर्चता दाम॥
प्रतिदिन तेरे चित्त में। बने गर्व का धाम॥२२७॥
बिना किये सब व्यर्थ है। कोरी है बकवास॥
विवेकपूर्वक ढूँढ लो। तुम ही करो प्रयास॥२२८॥

वाद मिटे संवाद से। वहाँ बैठिये रोज॥
विवेक से पलटे 'अहं'। आत्मतत्त्व ले खोज॥२२९॥
बोले वैसा ही चले। जन-जन में सम्मान॥
भक्ति मार्ग से जो चले। तन, मन बदले प्राण॥२३०॥

दुर्वासा के क्रोध से। अंबरीष को शाप॥
उनके हेतु प्रभु सहे। गर्भवास चुपचाप॥२३१॥
उपमन्यु को दूध नहीं। क्षीराब्धी दे दान॥
कभी उपेक्षा ना करें। भक्तों की भगवान॥२३२॥

बाल ध्रुव अति दीन था। प्रभु का भक्त महान॥
करुणाकर को ढूँढ़ता। जंगल में सुनसान॥२३३॥
चिरंजीव हो, पा गया। तारांगण में स्थान॥
कभी उपेक्षा ना करें। भक्तों की भगवान॥२३४॥

गजेन्द्र संकट में फँसे। नक्र चबाये पाँव॥
व्याकुल हो, भगवान से। मांगे उनकी छाँव॥२३५॥
शरण गया भगवान की। पाया जीवन दान॥
कभी उपेक्षा ना करें। भक्तों की भगवान॥२३६॥

अजामील को अंत में। नारायण का ध्यान।
प्रभुजी बड़े कृपालु थे। दिया मुक्ति का दान॥२३७॥
आश्रित जो श्रीराम के। उनके दाता राम॥
कभी उपेक्षा ना करें। भक्तों की भगवान॥२३८॥

हयग्रीव हरने लगा। विधि मुख से जब वेद॥
मत्स्य बने प्रभुजी तभी। नीच योनि बिन खेद॥२३९॥
कूर्म बने, धरती धरी। जग का रख्खा ध्यान॥
कभी उपेक्षा ना करें। भक्तों की भगवान॥२४०॥

भक्त बड़ा प्रल्हाद था। कष्ट उसे दिन रात॥
प्रभु, नृसिंह बन आ गये। पड़ी स्तंभ पर लात॥२४१॥
भीषण लपटें जल उठी। भागे सब नादान॥
कभी उपेक्षा ना करें। भक्तों की भगवान॥२४२॥

वज्रपाणि बिनती करें। धरिये वामन रूप॥
पहुँचाये पाताल में। चक्रपाणि, बलि भूप॥२४३॥
निःक्षत्रिय पृथ्वी करें। परशुराम भगवान॥
कभी उपेक्षा ना करें। भक्तों की भगवान॥२४४॥

गौतम मुनि के शाप से। शिला अहिल्या होय॥
चरण लगे प्रभु राम के। नारी सुंदर होय॥२४५॥
छुड़ा लिये सब देवता। रावण भूला शान॥
कभी उपेक्षा ना करें। भक्तों की भगवान॥२४६॥

संकट में थी द्रौपदी। लुटती उसकी लाज॥
दौड़े दौड़े आयहू। प्रभु भक्तों के काज॥२४७॥
बौद्ध रूप धर, मौन हैं। कलियुग घोर महान॥
कभी उपेक्षा ना करें। भक्तों की भगवान॥२४८॥

अनाथ के ही नाथ हैं। त्रैलोकी के नाथ॥
कल्की प्रभु अवतार लें। वे दीनों के नाथ॥२४९॥
वेदवाणि भी थक गयी। प्रभु का कर गुणगान॥
कभी उपेक्षा ना करें। भक्तों की भगवान॥२५०॥

लीला बड़ी अगाध है। नीच योनि अवतार॥
जनहित में सब कार्य हैं। प्रभु का स्नेह अपार॥२५१॥
उसे न जो पहचानते। नहीं करे विश्वास॥
महादुष्ट, पापी बड़ा। व्यर्थ हि लेता श्वास॥२५२॥

रामकथा का श्रवण हो। होकर जब तल्लीन॥
मन में अति संतुष्ट हो। रामचरण में लीन॥२५३॥
नहीं देह में चित्त हो। अहं मिटाय तुरंत॥
राम रूप में डूबके। मनोवासना अंत॥२५४॥

काम, संग में कामना। न हो, पाप की भूल॥
वासुदेव में वासना। होती सुख की मूल॥२५५॥
व्यर्थ कल्पना ना करो। असंग का नहि संग॥
सज्जन मन धरना सदा। सज्जन का ही संग॥२५६॥

दुर्जन भी सज्जन बनें। साधू संगति जोड़॥
सद्गति के ही काज से। संत संग ना छोड़॥२५७॥
काम देवता मदन तो। करें बुद्धि का नाश॥
मनातीत होकर रहो। तोड़ो मन का पाश॥२५८॥

असत्य के संकल्प का। छोड़ो भी निर्धार॥
सदा सत्य संकल्प ही। सज्जन मन आधार॥२५९॥
व्यर्थ जल्पना ना करो। विकल्प कर लो दूर॥
सदा रहो एकांत में। राम भजन में चूर॥२६०॥

जग में भजने योग्य हैं। एक ही सीताराम॥
रामबाण भी एक है। एक वचन श्रीराम॥२६१॥
अवलोकत उनका चरित। जग का हो उद्धार॥
करो जानकीनाथ से। विवेकपूर्वक प्यार॥२६२॥

विचारपूर्वक बोलता। समझ बूझती चाल॥
दुखी जीव सुख पा गये। गले न भव की दाल॥२६३॥
सभी दूर की सोचकर। करता मुख से बात॥
अनुशासित नरवीर ही। देता सबको मात॥२६४॥

विरक्त अरु हरि भक्त है। विज्ञान-ज्ञान की धार॥
निश्चयपूर्वक जानता। बुद्धि, देह के पार॥२६५॥
उसके दर्शन-स्पर्श से। पुण्य लाभ का भार॥
ज्ञानबोध जब भी करें। सब संदेह असार॥२६६॥

वीतराग जो है सदा। नहीं गर्व का भास॥
क्षमाशील अरु शांत है। दयादक्ष, प्रभुदास॥२६७॥
जिनके अंतःकरण में। क्षोभ, दैन्य ना मोह॥
उनको योगी जानिये। उनकी प्रज्ञा लौह॥२६८॥

मेरे मन धरनी तुझे। सज्जन संगति थोर॥
दुर्जन मन पलटाइ के। पाप मिटें सब घोर॥२६९॥
सत्यबुद्धि का उदय हो। सत्यमार्ग मिल जाय॥
महाक्रूर उस काल का। मन में भय न समाय॥२७०॥

जग में जो कुछ दिख रहा। उसका होगा नाश॥
भय ही भय जग में भरा। भय से बुद्धि विनाश॥२७१॥
'अनंत' वह सद्वस्तु है। ना हो जिसका नाश॥
द्वैत न देखें वस्तु में। संतों को विश्वास॥२७२॥

दुनिया में जो श्रेष्ठ थे। ज्ञान बताते लोग॥
अज्ञानी सब जीव तो। फिर भी भोगे भोग॥२७३॥
देह बुद्धि के कारण हि। कर्म न टाले जाय॥
तेरी ही थाती तुझे। 'मैं' से ना मिल पाय॥ २७४॥

आत्म ज्ञान ही धन सही। भ्रम से मिल ना पाय॥
इसीलिए यह जीव भी। अज्ञानी रह जाय॥२७५॥
मैं ही तो यह देह हूँ। निश्चय ना टल पाय॥
तेरी ही थाती तुझे। 'मैं' से ना मिल पाय॥ २७६॥

आत्मतत्त्व बहुमोल है। जग में भरा महान॥
भाग्यहीन को भास हो। सगुण मूर्ति पाषाण॥२७७॥
प्रभु में निष्ठा की नहीं। आत्मतत्त्व बिसराय॥
तेरी ही थाती तुझे। 'मैं' से ना मिल पाय॥ २७८॥

जिसका जो अधिकार है। वो ही जाये भूल॥
त्रिगुण पाश में बद्ध है। चुभे देह में शूल॥२७९॥
गुण में लिपटी वृत्ति से। निवृत्ति न हो पाय॥
तेरी ही थाती तुझे। तब तक ना मिल पाय॥ २८०॥

'रामदासजी' कह रहे। इतना करो प्रयास॥
सद्गुरु चरण न छोड़ना। मन में धर विश्वास॥२८१॥
अंजन से आँखें खुली। सद्गुरु करत उपाय॥
तेरी ही थाती तुझे। 'मैं' से ना मिल पाय॥ २८२॥

नहीं समझता, ना समझ। मन की गहरी खोह॥
किंचित टाले, ना टले। मन से संशय मोह॥२८३॥
अहंकार नहि गल सका। नहीं गला है क्रोध॥
बलपूर्वक ना प्राप्त हो। आत्मतत्त्व का बोध॥२८४॥

अविद्या के कारण ही। मानव भटका जाय॥
भ्रम से भूले जीव को। निजहित समझ न पाय॥२८५॥
बिन जाँचे, पारखे बिना। सिक्का गाँठ बँधाय॥
सच क्या है, क्या झूठ है। मानव समझ न पाय॥२८६॥

गुरुकृपा से, विवेक से। ढूँढ सत्य, श्रीमान॥
आँच न आती साँच पर। सादर पाय सुजान॥२८७॥
ढूँढत ढूँढत एक दिन। प्रभु ही सम्मुख पाय॥
उनके दर्शन मात्र से। मन का भ्रम मिट जाय॥२८८॥

अनात्म के ही ध्यान से। जन्म लिया है जीव॥
अहंकार, अज्ञान को। लेकर जन्मा जीव॥२८९॥
विवेक से निजरूप में। जीव लीन हो जाय॥
स्वस्वरूप में सहज ही। जन्मभाव छिन जाय॥२९०॥

आँखों को जो दिख रहा। कल्पांतक ना पाय॥
मिट जाये साकार तब। निराकार बच जाय॥२९१॥
विश्व हि सारा नष्ट हो। कुछ भी ना बच पाय॥
ढूँढो उस सद्वस्तु को। अविनाशी मिल जाय॥२९२॥

टूट-फूट हो, सब गले। पंचतत्त्व सविकार॥
अविनाशी सद्वस्तु को। व्यापत नहीं विकार॥२९३॥
हर जगह वह व्याप्त है। 'मैं' से दिख ना पाय॥
ढूँढो उस सद्वस्तु को। अविनाशी मिल जाय॥२९४॥

सद्वस्तु वह निराकार। ब्रह्मा का आधार॥
मानव बुद्धि क्या कहूँ। वेद थक गये चार॥२९५॥
आत्मानात्म विवेक से। तदाकार हो जाय॥
ढूँढो उस सद्वस्तु को। अविनाशी मिल जाय॥२९६॥

चर्मचक्षु से ना दिखे। ज्ञान चक्षु से देख॥
गुरु ही आँखें खोल दे। वेदों का है लेख॥२९७॥
आत्मतत्त्व दर्शन करें। दृश्य शक्ति खो जाय॥
ढूँढो उस सद्वस्तु को। अविनाशी मिल जाय॥२९८॥

पीत, नील ना श्याम है। श्वेत न उसका रंग॥
नहीं व्यक्त, अव्यक्त नहीं। रूप, रंग ना अंग॥२९९॥
'दास' कहे विश्वास से। मुक्ति मार्ग पा जाय॥
ढूँढो उस सद्वस्तु को। अविनाशी मिल जाय॥३००॥

सत्य ढूँढ़ते ढूँढ़ते। सत्य तुझे मिल जाय॥
मनोबोध करते चलो। बुध जन ही बन जाय॥३०१॥
सज्जन के सहवास में। तर जाये इन्सान॥
मन में धर अनुराग, फिर। सद्वस्तू पहचान॥३०२॥

बहु कुशलता दिखाइकै। किया तत्त्व सुविचार॥
निर्णय तो मन ही करें। हटाइकै कुविचार॥३०३॥
मन रे, सबका सार तो। जाने अलग सुजान॥
व्याप्त होय सब में मगर। सबसे अलग हि जान॥३०४॥

देह ज्ञान से ना कभी। ना पढ़ते ब्रह्मज्ञान॥
ना मिलता संगीत से। छेड़ सुरीली तान॥३०५॥
योग सिद्धि या यज्ञ से। नहीं छोड़कर भोग॥
समाधान तो देत है। सज्जन का सहयोग॥३०६॥

चार वाक्य* ही वेद के। महावाक्य कहलाय॥
तत्त्वों का पंचीकरण। संतलोग समझाय॥३०७॥
मौन रह, संत दिखाते। हमें दूज का चाँद॥
चन्द्र दिखे संकेत से। अवलम्बन के बाद॥३०८॥

जग में जो नहि दिख रहा। ढूँढ उसे दिन रात॥
वह रहस्य सद्वस्तु का। मुश्किल आये हाथ॥३०९॥
हाथ धरो तो ना धरें। देख न पाये नैन॥
सारे जग में व्याप्त वह। मिल जाये तो चैन॥३१०॥

* प्रज्ञानं ब्रह्म, अहं ब्रह्मास्मि, तत्त्वमसि, अयमात्मा ब्रह्मवेदान्तर्गत चतुर्वाक्य

मैंने तो प्रभु पा लिया। कोई मूर्ख सुनाय॥
प्रभु तो तर्कातीत है। तर्क किये ना पाय॥३११॥
अहंभाव से देखता। प्रभु ना देखा जाय॥
उसको जो भी देख ले। एक रूप हो जाय॥३१२॥

शास्त्रों में क्या ढूँढना। नानाविध हैं रूप॥
प्रतिपादन ना एक है। नहीं बैठते चूप॥३१३॥
आपस में लड़ते हुए। करते सदा विरोध॥
आत्मबोध तब होत है। जब हो ज्ञान प्रबोध॥३१४॥

मीमांसा, तर्क, न्याय। श्रुति या स्मृति की बात॥
अपार ग्रंथ भार है। व्यर्थ सभी का साथ॥३१५॥
शेष स्वयं हि मौन अब। स्थिर हो बैठा देख॥
मन, बुद्धि को भुलाइकै। रहना मन रे नेक॥३१६॥

जानबूझ ही अन्न में। मक्खी निगली होय॥
खाये बहु मिष्ठान्न हि। स्वाद न पाये कोय॥३१७॥
अहंभाव मक्खी बना। बुद्धि चढ़ गयी भेंट॥
ज्ञान अन्न उस जीव का। नहीं पचाये पेट॥३१८॥

मन रे, व्यर्थ विकार से। बढ़ते सारे भेद॥
मन रे, व्यर्थ विवाद से। जन्मा है यह खेद॥३१९॥
अहंभाव तुझमें भरा। निकाल मन का दोष॥
जनता को न सिखाइये। तू भी ना निर्दोष॥३२०॥

अहंकार मन में भरा। दुख पाये नादान॥
उसने मुख से जो कहा। व्यर्थ सभी है ज्ञान॥३२१॥
सुख में रहना सीख ले। सुख ही सुख पा जाय॥
अहंकार तुझ में भरा। उसे ढूंढ़ता जाय॥३२२॥

अहं भरा, विवेकशील। नीति मार्ग दे छोड़॥
अनीति के बलबूते हि। जग में कीर्ती जोड़॥३२३॥
उसका मन, उसको स्वयं। दुराचारि कह जाय॥
न्याय नीति को छोड़के। बुद्धि भटकती जाय॥३२४॥

'मैं ही तो यह देह हूँ'। ऐसा हो कुविचार॥
आत्मा, देहातीत है। हित का नहीं विचार॥३२५॥
देहबुद्धि के स्थान पर। आत्म बुद्धि तब होय॥
साधु की संगती धरो। स्थित प्रज्ञ जो होय॥३२६॥

मन के कल्पित विषय को। झूठा समझ, हटाय॥
निर्गुण, त्रिगुणातीत को। मन से समझा जाय॥३२७॥
मन के कल्पित जाल की। दूर कल्पना होय॥
साधु की संगती धरो। स्थितप्रज्ञ जो होय॥३२८॥

देहजनित संसार का। चिन्तन करता जाय॥
लोभ-मोह ही हृदय में। दृढ़तर होता जाय॥३२९॥
मुक्ति-कांता-वरण तभी। हरि का चिन्तन होय॥
साधु की संगती धरो। स्थितप्रज्ञ जो होय॥३३०॥

मित्र, स्त्री, पुत्रादि से। अहंकार विस्तार॥
मकड़जाल में कीट-सा। फिरता बारंबार॥३३१॥
बलपूर्वक अभ्यास से। जन्म-मृत्यु नहि होय॥
साधु की संगती धरो। स्थितप्रज्ञ जो होय॥३३२॥

शाश्वत् का निश्चय करो। निःसंशय मन होय॥
'रामदासजी' कह रहे। मनस्थिति स्थिर होय॥३३३॥
मिलें घड़ी, वह शुभ घड़ी। सार्थक घड़ियाँ होय॥
साधु की संगती धरो। स्थितप्रज्ञ जो होय॥३३४॥

अर्न्तमुख निजवृत्तियाँ। आत्मरूप हो जाय।
संत वही जो 'सद्गुणी'। दीन नहीं कहलाय॥३३५॥
देहबुद्धि बाधा बढ़े। प्रपंच का हो दास॥
सज्जन को नहि बांधता। अहंभाव का पाश॥३३६॥

'अनंत' का पूछो पता। 'अनंत' जाने संत॥
मन का 'अहं' मिटाइकै। अहंकार का अंत॥३३७॥
गुणातीत-निर्गुण, उसे। रखना मन में याद॥
देहबुद्धि की बात भी। कभी न करना याद॥३३८॥

'मैं हूँ देह' न सोचिये। 'अहमात्मा' समझाय॥
ज्ञानचक्षु से जानिये। आत्मतत्त्व कहलाय॥३३९॥
मन चंचल है, दौड़ता। बलपूर्वक लो थाम॥
सदासर्वदा चित्त में। ढूँढो आत्माराम॥३४०॥

मूलतत्त्व जो सत्य है। देख न पाये कोय॥
चर्मचक्षु का भास है। जो भी दिखता होय॥३४१॥
निराभास निर्गुण वही। नहीं आकलन पाय॥
अहं भरा हो हृदय में। सत् स्वरूप हट जाय॥३४२॥

विषययुक्त जो कल्पना। वही अविद्या जान॥
ब्रह्मयुक्त जो कल्पना। वही सुविद्या जान॥३४३॥
विद्या हो, अविद्या हो। आदितत्त्व के रूप॥
विवेक से फिर भेद यह। होता है इक रूप॥३४४॥

स्वस्वरूप में अहंकार। राहू का अवतार॥
व्योमवत् वह मूलतत्त्व। ढँक जाये हर बार॥३४५॥
दिशा दिशा में प्रवेशती। अंधकार की चोंच॥
सद्विचार से कार्य कर। गहराई से सोच॥३४६॥

चर्मचक्षु से ना दिखे। प्रयास करता लाख॥
ज्ञानचक्षु से देख लो। भव की उड़ती राख॥३४७॥
क्षयातीत जो अक्षय है। मोक्ष देत श्रीराम॥
साक्षिभाव से संत की। रक्षा करते राम॥३४८॥

सबके माथे पर लिखें। विधि लिखित के लेख॥
ब्रह्माजी के भाल पर। किसने लिख्खा लेख॥३४९॥
शिवजी विश्व जला रहे। सबको देते मार॥
लेकिन शिवजी का स्वयं। कौन करें संहार॥३५०॥

बारह सूरज विश्व में। ग्यारह रुद्र महान॥
इन्द्र देवता अनगिनत। बिरला है पहचान॥३५१॥
देव देवता ढूँढ़ते। प्रभुजी मिल ना पाय॥
प्रमुख देवता कौन है। पहचानी ना जाय॥३५२॥

नहीं टूटते-फूटते। देवों के भी देव॥
नहीं टलेंगे, अटल हैं। दीन हीन नहि देव॥३५३॥
आंखें कभी न देखती। दृष्टी से भी दूर॥
उसको कभी न दिख सके। अहं भरा भरपूर॥३५४॥

जिसकी जैसी रुचि रहे। पूजे वह भगवान॥
असत्य की इस भीड़ में। प्रभु की क्या पहचान॥३५५॥
कोटि-कोटि हैं देवता। लगा हुआ है ढेर॥
जो जिसको भी मानता। भक्ति मार्ग के फेर॥३५६॥

तीन लोक की निर्मिति। हुई जहाँ से होय॥
उस देवों के देव को। समझ न पाया कोय॥३५७॥
देवों के भी देवता। छुपा हुआ किस ठौर॥
सूक्ष्म रूप उस ब्रह्म को। सद्गुरु देखे थोर॥३५८॥

जग में अनेक मठ मिलें। गुरु भी मिलें अनेक॥
मंत्र ज्ञान भी ढेर हैं। मार्ग न उनके नेक॥३५९॥
जादू टोना कर रहे। मुक्ति बाँटते जाय॥
पाखण्डी वे जीव तो। स्वयं मुक्ति नहि पाय॥३६०॥

जादूगर नहि चालबाज। धन दौलत ना लूट॥
निंदा, मत्सर ना करें। भक्ति न जाये छूट॥३६१॥
व्यसनमुक्त, उन्मत्त नहि। संगत ना बिगड़ाय॥
ज्ञानवन्त, अवधूत ही। सच्चे साधु सुहाय॥३६२॥

व्यर्थ न जो बोले कभी। कामांध न वाचाल॥
नहीं करे, भाषण बड़े। नहीं बजाये गाल॥३६३॥
मुख से जैसा बोलना। वैसी करनी, नेक॥
सद्गुरु ऐसा ढूँढ़ना। अंदर-बाहर एक॥३६४॥

जग में ज्ञानी भक्त हो। वीतराग, सविवेक॥
दयानिधि हो क्षमाशील। योगी हो वह नेक॥३६५॥
व्युत्पन्न मति सदा रहे। चतुर बुद्धि का जान॥
उसकी संगत नित करो। जागे प्रज्ञा जान॥३६६॥

कभी नहीं था, सो हुआ। शून्य हुआ साकार॥
सज्जन संगत नित करो। समझो ज्ञान-विचार॥३६७॥
अनिर्वाच्य भी वाच्य है। सज्जन मुख की बात॥
संत-संग में ढूंढ़िये। आत्मतत्त्व दिन रात॥३६८॥

ब्रह्मरूप श्रीराम हैं। उनमें छुप निश्चिंत॥
स्वस्वरूप के चिंतन से। नहीं होत भयभीत॥३६९॥
भिन्न रूप न रहे कभी। जग को ना दिख पाय॥
दोनों ही इक रूप हों।आत्मतत्त्व हो जाय॥३७०॥

राम सदा ही निकट हैं। सत्य ढूँढ नादान॥
राम हि स्वस्वरूप हैं। अलग नहीं पहचान॥३७१॥
अहंभाव हि वियोग है। मिटे तो हि संयोग॥
अखण्ड मिलता प्यार से। राम-मिलन का योग॥३७२॥

पिण्ड वही ब्रह्माण्ड है। ब्रह्म वही है भूत॥
स्वात्मतत्त्व ही शाश्वत है। असत्य सब अनुभूत॥३७३॥
मन को जो आभास है। उसको खूब निहार॥
उसको सत्य न मानना। उस पर चित्त न वार॥३७४॥

शरीर की आसक्ति को। ज्ञान-शस्त्र से काट॥
बन विदेही, चले चलो। भक्ति मार्ग की बाँट॥३७५॥
अनासक्त बनकर रहो। निंदनीय सब छोड़॥
झूठे इस संसार को। सच से कभी न जोड़॥३७६॥

ब्रह्माण्ड हि जिसने रचा। प्रभु को तू पहचान॥
मोक्ष मिले तत्काल ही। देखत ही भगवान॥३७७॥
उस निर्गुण को नित्य ही। सगुण रूप में देख॥
माया में लिपटो नहीं। सुख मिलता प्रत्येक॥३७८॥

सृष्टि का नहीं रचयिता। पालक भी ना होय॥
परावाणि के पार है। मायाजाल न ढोय॥३७९॥
निर्विकल्प की कल्पना। जिस मन लेत उछाल॥
दुनियादारि भुलाइकै। सुखी रहे चिरकाल॥३८०॥

देह बुद्धि को मूढ हि। बैठा सच्चा जान॥
कल्पांतक भी ना मिले। उसको सच्चा ज्ञान॥३८१॥
'मैं' में ही उलझा रहा। परब्रह्म नहि जान॥
कभी न मन से मिट सकें। शून्य रूप अज्ञान॥३८२॥

जिसका रूप नहीं ढले। वही न मन को ज्ञात॥
सर्वोत्तम का रूप वह। सारे जग में व्याप्त॥३८३॥
उपमानों की क्या कहें। अनुपमेय साक्षात्॥
नहीं संग, निःसंग ना। कल्पना हि बिसरात॥३८४॥

नहीं ज्ञात, अज्ञात ना। वह तो उसके पार॥
वेदों, शास्त्र-पुराण के। वर्णन से भी पार॥३८५॥
दृश्य नहीं, अदृश्य नहीं। साक्षी ना कहलाय॥
श्रुतियाँ भी ना जानती। स्मृतियाँ ना समझाय॥३८६॥

देव हृदय में है बसा। कैसा है, वह कौन॥
साधक, सादर पूछता। उत्तर जिसका मौन॥३८७॥
देह छूटता, देव फिर। कहाँ करत विश्राम॥
जन्मान्तर के देह में। कैसे प्रकटे राम॥३८८॥

देव हृदय में है वसा। ऐसा है तू जान॥
आसमाँ सा विशाल वह। व्यापक विश्व महान॥३८९॥
सदा हि संचारीत है। आता जात न जान॥
उसके बिन ब्रह्माण्ड में। शेष न कोई स्थान॥३९०॥

आसमान के सूक्ष्म कण। तरल, वायु, जड़ होत॥
राघव प्रभु श्री रामजी। व्यापत सारे स्रोत॥३९१॥
उन्हें देखते देखते। तदाकार सब होय॥
लक्ष्य हो या अलक्ष्य हो। रामरूप सब होय॥३९२॥

अनंत उस आकाश सम। अनंत है रघुरूप॥
मन में जप लो राम तो। भवभय-हर रघु भूप॥३९३॥
उनको जो हम देख लें। देहबुद्धि मिट जाय॥
फिर तो जितना देखिये। भूख न मिटने पाय॥३९४॥

विश्वव्यापि आकाश है। जग में यह कहलाय॥
रघुनायक श्रीराम को। वह उपमा न सुहाय॥३९५॥
द्वैतभाव किंचित नहीं। सबको व्यापे राम॥
कण कण के अंदर बसे। विश्वरूप श्रीराम॥३९६॥

पुरातन, अतिविशाल है। उस अनंत का रूप॥
तर्कबुद्धि जाने नहीं। ज्ञानी होते चूप॥३९७॥
गूढ़, गूढ़तर, गूढ़तम। शीघ्र समझ में आय॥
गुरु के कृपा प्रसाद से। सब रहस्य खुल जाय॥३९८॥

गुरु कृपा से ज्ञान होत। आत्मबोध हो जाय॥
साक्षी स्थिति के पार हि। शेष नहीं रह पाय॥३९९॥
मन, उन्मन हो जाय, फिर। शब्द नहीं मिल पाय॥
जल-थल या आकाश भी। रामरूप हो जाय॥४००॥

'अयमात्मा ही ब्रह्म' है। आत्मतत्त्व का बोध॥
मुझसे दूजा कुछ नहीं। दूर, सर्व अवरोध॥४०१॥
इतने दिन के बाद जब। जीव हि शिव हो जाय॥
वह विदेही, आत्मरूप। अन्तर्मुख हो जाय॥४०२॥

मन रे तूने पा लिया। रहस्य जो कहलाय॥
अपने अंदर झाँकने। प्रयत्न करता जाय॥४०३॥
संतों के उपदेश से। मन निश्चय कर पाय॥
संगत संतों की धरो। भवसागर तर जाय॥४०४॥

सब की संगत छोड़ दे। साधू संगत जोड़॥
मन में आदर हो भरा। संत चरण नहि छोड़॥४०५॥
जिनका धरते संग ही। महा दुःख हो भंग॥
बिना किये कुछ साधना। मोक्ष देत, सत्संग॥४०६॥

संगत संतों की भली। सभी संग छुट जाय॥
क्षणभर के सत्संग से। जीव मोक्ष को पाय॥४०७॥
साधकों की कठिन राह। शीघ्र सुलभ हो जाय॥
द्वैत भावना नष्ट हो। प्रभु दर्शन हो जाय॥४०८॥

'मनोबोध' के पठन से। महादोष मिट जाय॥
महामूर्ख, कर साधना। महाज्ञान को पाय॥४०९॥
ज्ञान मिले, वैराग्य से। महाशक्ति मिल जाय॥
'दास' कहे विश्वास से। महामुक्ति को पाय॥४१०॥

॥जय जय रघुवीर समर्थ॥

आरती

संत श्रेष्ठ श्री रामदास की।
मिल जुल कर सब आरती गाये।
प्रभु राम के दर्शन पाये।
राम भक्त सब आरती गाये॥टेक.॥

छत्रपति श्री शिवाजी, स्वयं।
दान कर दियो सारा राज।
संतों को क्या राज-पाट से।
उनका दान उन्हें लौटाये॥१॥ राम भक्त.....

निराभिमानी, महातापसी।
अपरिग्रह की मूर्ति थे।
महाराष्ट्र की जनता के प्रिय।
'समर्थ' ही कहलाये॥२॥ राम भक्त.....

प्रत्यय, प्रबोध अरु प्रयत्न ही।
राष्ट्र संत का जीवन था।
समाज के हर व्यक्ति के वे
शिक्षक बनकर आये॥३॥ राम भक्त.....

श्रीराम के महाभक्त थे।
जन-जन को उपदेश दिया।
'मनोबोध' को जो भी पढ़ता।
रामरूप में मिल जाये॥४॥ राम भक्त.....

दत्तात्रेय माहुरकर (जबलपुर)

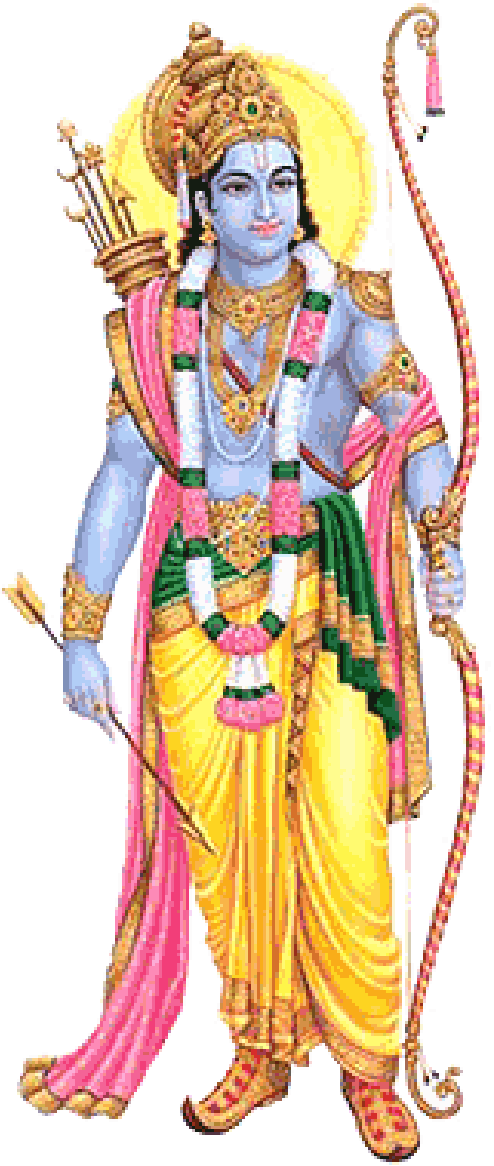

कल्पवृक्ष भी राम हैं।
कामधेनु भी राम।।
चिन्तामणि भी राम हैं।
कुबेर का धन, राम।।